समकालीन हिन्दी कहानियों में दलित चेतना

डॉ. भौलेंद्र कुमार शुक्ल
हिंदी विभाग
सरदार पटेल महाविद्यालय,चंद्रपुर

सारांश –

दलित भाब्द का सामान्य अर्थ है जिसको कुचला, दलन और दलित किया गया है। विकास" ाील दे" ाों और औपनिवेि" ाक साम्राज्यवादी भाासकों के अधीन दे" ाों मे दलित मानव सामाजिक और आर्थिक–यंत्रणाओं के कारण अधिक दारूण और अमानवीय रहा है। भारतीय सनातनी सामाजिक चातुर्वण्य व्यवस्था से लेकर आज तक की वर्गीय व्यवस्था में दलित समाज सांस्कृतिक विशमता आर्थिक भाोशण और सामाजिक दृश्टि से उपेक्षित रहा है वि" व में भाोशितों और गुलामों का दूसरा वर्ग नीग्रो समाज रहा है। रंगभेद से पीड़ित नीग्रो साहित्यकारों ने ब्लैक लिटरेचर' के माध्यम से मानवीय अधिकारों की प्राप्ति हेतु संघर्श किया, निग्रो साहित्य के समान ही भारतीय दलित युवा पीढ़ी ने साहित्य सृजन के माध्यम से अपनी संवेदनहीन वाणी को संवेदन" ाील बनाया है चेतना के विकास की पृश्ठभूमि सर्वप्रथम मराठी दलित साहित्य में मिलती है।

प्रस्तावना :–

दलित साहित्य के प्रारम्भिक दौर में ज्यादातर कविताएँ ही लिखी गई। लेकिन सातवें द" ाक में अनेक दलित रचनाकारों ने कहानी विधा को अपनाया। उस दौर की कहानियों को हिन्दी सम्पादकों ने प्रकाि" ात करने में वि" ोश रूचि नहीं दिखाई । फिर भी दलित कथाकारों ने हौसला नहीं खोया और रचनाकर्म को एक आन्दोलन की तरह जारी रखा। इसी दौर के कथाकारों में मोहनदास नैमि" ाराय की कहानी, जिसे वे अपनी प्रथम कहानी मानते हैं, 'सबसे बड़ा सुख' कथालोक में छपी और इसी प्रकार ओमप्रका" ा वाल्मीकि की 'अँधेरी बस्ती' निर्णायक भीम (सं. आर. कमल, कानपुर) के अंक में छपी। पाठकों को आ" वस्त करती हुई इन काहानियों में दलित अस्मिता के सरोकारों और दलित चेतना की बैचैना का तीखा स्वर दस्तक दे रहा था।

हिन्दी दलित कहानी का समकालीन परिदृ" य आठवें द" ाक में तेजी से उभरता है जिसमें कई नए रचनाकार उभरकर अपनी उपस्थिति दर्ज करते हैं, और अपनी कहानियों के व्दारा दलित साहित्य को एक मजबूत आधार देने की कोि" ा" ा करते है। कथाकारों का यह प्रयास जहाँ सर्जनात्मक परिवे" ा की गम्भीर चुनौतियों से टकराता है, वहीं हिन्दी रचनाकार अनभिज्ञ था।

हिन्दी कहानी के अनेकों उतार–चढ़ाओं, तथाकथित आन्दोंलनों से अलग दलित कहानी बदलते हुए सामाजिक परिदृ" य के यथार्थ चित्रण की एक वि" ाश्ट धारा के रूप में सामने आती है जिसकी

और हिन्दी समीक्षकों का ध्यान बहुत देर से गया है । हिन्दी कहानी.... आदि पड़ावों से गुजरते हुए वर्तमान हिन्दी कहानी का रूझान उसे वैचारिक प्रतिबध्दता से जोड़ता है। यह एक बदलाव था हिन्दी कहानी के लिए जिसमें यथार्थवादी चित्रण और पाठकों ने कहानी के कल्पना लोक और रोमानी मायावी संसार से मुक्त होकर एक ताजगी का अहसास महसूस किया था।

इसी के साथ दलित चेतना की कहानियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज की । आठवें द" ाक में यह उपस्थिति और अधिक तीव्रता से उभरी लेकिन हिन्दी सम्पादकों और समीक्षकों के उपेक्षापूर्ण रवैए के कारण दलित रचनाएँ लगातार चर्चा से बाहर रहीं। दलित रचनाकारों के संघर्श ने आखिर इस तिलस्म को तोडने में सफलता पाई। दलित कथाकार मोहनदास नैमि" ाराय की कहानियाँ जहाँ दलित पत्रिकाओं में छप रही थी, वहीं गरिमा भारती' 'कुरूक्षेत्र', संचेतना', स्वतंन्त्र भारत' में भी छपी। इसी प्रकार ओमप्रका" ा वाल्मीकि की कहानियाँ 'पंजाब केसरी' 'जनसत्ता' (चंडीगढ़ संस्करण), 'नवभारत' , 'निश्कर्श आदि में छपकर एक वि" ाल पाठक वर्ग तक पहुँचने में सफल रहीं।

नवें द" ाक में दलित कहानियों ने अपनी एक खास पहचान निर्मित की। हिन्दी साहित्य के लिए दलित साहित्य की चर्चा नई नहीं थी। हिन्दी का कई महत्वपूर्ण पत्रिकाएँ मराठी दलित साहित्य पर अपने वि" ोशांक प्रका" ित कर चुकी थीं । हिन्दी पाठक दया पवार, बाबुराव बागूल, गंगाधर पानतावणे के नाम और उनकी रचनाओं से परिचित था। लेकिन हिन्दी दलित रचनाकारों से उन्हें परहेज था। हिन्दी दलित लेखक उनकी देहरी पर खड़े दस्तक दे रहे थे। उन देहरियों पर जहाँ उनका प्रवे" ा निशेध्द था। मराठी दलित साहित्य की चर्चा से उनकी महानता सहिश्णुता पर कोई आँच नही आँती थी। हिन्दी दलित कथाकार उनके इस भ्रमजाल का छिन्न–भिन्न कर रहे थे। हिन्दी समाज की संकीर्णता, जाँति भावना को ढका–दबा भ्रम उघाड़ रहे थे। इसीलिए हिन्दी सम्पादन इन 'अधकचरी' अपरिपक्व रचनाओं को न छापना ही बेहतर मान रहे थे।

हिन्दी दलित कथाकारों की जद्दोजहद की दस्तक पर दरवाजा खुला। 'हंस' (सं. राजेन्द्र यादव) ने उन्हें एक मंच दिया। नवें द" ाक में ओमप्रका" ा वाल्मीकि, मोहनदास नैमि" ाराय, भयौराजसिंह बेचैन, सूरजपाल चौहान, डॉ. सु" ाीला टाकभौरे आदि की काहानियाँ 'हंस' में छपी।

अन्य पत्र–पत्रिकाओं–लोकमत समाचार', राजस्थान पत्रिका', 'कथानक' 'इंडिया टुडे' 'वसुधा' 'प" यन्ति', 'संचेतना', दस्तक', 'युध्दरत आम आदमी', दैनिक ट्रिब्युन' आदि ने हिन्दी की कहानियाँ प्रका" ित कीं।

नवें द" ाक में अनेक कथा–संकलन भी आए। डॉ. महीप सिंह व्दारा चयनित वार्शिक कथा–संकलनों में दलित कहानियाँ भाामिल की गईं। डॉ. पुश्पपाल सिंह व्दारा सम्पादित कहानी–संकलन 'कहानी चयन 1996' में, ओमप्रका" ा वाल्मीकि की कहानी–संग्रह 'यातना की परछाइयाँ', डॉ कुसुम वियोगी व्दारा सम्पादित 'समकालीन दलित कहानियाँ',मोहनदास नैमि" ाराय का कहानी–संग्रह 'आवाजे, सुरजपाल चौहान का 'हेरी कब आ जाएगा' , डॉ. सु" ाीला टाकभौरे का 'टूटता

वहम', ओमप्रका" ा वाल्मीकि का सलाम आदि कहानी ''संग्रहां ने नवें द" ाक में दलित कहानी की यात्रा का एक अहम पड़ाव पार किया है।

हिन्दी दलित कहानी की यह यात्रा सहज और सरल यात्रा नहीं है । लम्बी संघर्श यात्रा है, जो सातवें द" ाक तक काँटों पर चलते हुए लहूलुहान होकर भी अपने विस्फोटक तेवर की पहचान बनाने में सफल रही है। दलित कहानी ने समस्याओं सें मुठभेड़ की है। अपने सार्जनात्मक, ओक्रोि" ात स्वर को यथार्थ की भूमि पर खड़ा करके बदलाव के नए आयाम स्थापित किए हैं। यथार्थ की संघर्शपूर्ण स्थितियों, सामाजिक विशमताओं, भेदभाव, अन्तर्विरोधों को चित्रित करने की प्रवृति उसने किसी अपना दबाव या प्रतिक्रीया के तहत ग्रहण नहीं की है बल्कि यह उसका स्वाभाविक और वस्तुनिश्ठ स्वरूप है। आवेगपूर्ण विरोध के व्दारा परिवर्तन की पक्षधरता उसका जीवन–मूल्य है।

मोहनदास नैमि" ाराय की कहानी 'हारे हुए लोग'दलितों को किराए का मकान मिलने में आनेवाली परे" ाानियों और जात–पाँत की भावना में उपजे तिरस्कार की कहानी है। दलित अधिकारी को नए भाहर में आने पर किराए का मकान ढूँढने में जिस पीड़ा और अपमान बोध से गुजरना पड़ता है, वह कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। रामनारायण व्दिवेदी का यह कथन समूची व्यवस्था के नग्न रूप की कलई खोल देता है, 'अजी हमें क्या मतलब, आप कलट्टर भी हैं। नौकरी करने से आदमी की जात तो नहीं बदल जाती। रहता तो वही है।'

कमल सचदेव मोहनदास नैमि" ाराय की कहानियों पर टिप्पणी करते हैं : 'आत्मकथा में जहाँ उनके सामने एक एक सीमित परिवे" ा था, कहानियों में यह परिवे" ा व्यापक हुआ है।'' आगे वे कहते है– ''दलित की पीडा का व्यक्त कर देना मात्र इन कहानियों का लक्ष्य नहीं है बल्की उनके भीतर सुलगता आक्रो" ा धीरे–धीरे विरोध में बदलता दिखाने के प्रति भी मोहनदास नैमि" ााय सतर्क रहे है।

दलित कथाकारों में सुरजपाल चौहान ने बहुत कम समय में अपनी पहचान स्थापित की है। 'साजि" ा' उनकी चर्चित कहानी है। इस कहानी में सरकारी तन्त्र में विद्यमान वर्ण–व्यवस्था के पोशक तत्व किस प्रकार दलित–विरोधी साजि" ा रचते हैं, इसका खुलासा बहुत ही सहज ढंग से हुआ है। नत्थु बैंक से लोन लेकर एक मेटाडोर खरीदना चाहता है। बैंक मैनेजर रामसहाय उसे सलाह देता है, 'ट्रांसपोर्ट के काम में कईप्रकार के लफड़े हैं, फिर तुझे इस काम का अनुभव भी नहीं है। यह काम तो बड़े–बड़े व्यापारियों का है।'

'तो साहब आप ही बताइए मैं क्या करूँ ?' नत्थु ने असमंजस की–सी स्थिति में कहा।

तू पढ़ा–लिखा है। तू पिगरी लोन हेमु फॉर्म भरकर क्यों नही देता ?

दलित अपने व्यवसाय में कुछ बदलना चाहे तो यह तन्त्र उसे घसीटकर वहीं डाल देता है। रामसहाय बहुत ही चालाकी से नत्थु को सलाह देता है। तन्त्र की ये मनोगत स्थितियाँ यथास्थिति बनाए रखने के लिए सक्रिय होती हैं। लेकिन दलित अब ऐसे तन्त्र को चुनौति देने लगे हैं।

दलितों में एक ऐसा वर्ग भी उभर रहा है जो इस टूटन और हीनताबोध की जिजीविशा को बराबर रखकर भाक्ति करने का जतन कर रहे हैं । भले ही आवेग के अनि" चय के दोराहें पर हैं,

किन्तु भविश्य में उन्हें प्रका" ा किरण दिखाई दे रही है। 'कहाँ जाए भविश्य में उन्हें प्रका" ा किरण दिखाई दे रही है। कहाँ जाए सती" ा (ओम प्रका" ा वाल्मीकि) में सती" ा इसी संघर्श का प्रतीक है। 'अप्पो दीपो भव' को आद" र्ा मानकर दलितों में नई चेतना का प्रादुर्भाव हुआ हैं।

जात–पाँत की भावना से ऊपर उठकर यदि कोई व्यक्ति मैत्रीभाव स्थापित करना चाहता है तो वर्ण–व्यवस्था की जड़ें इतनी गहरी हैं कि उसे ही सन्देह की दृश्टि से देखा जाने लगता है। 'सलाम' (ओमप्रका" ा वाल्मीकि) कहानी का कमल उपाध्याय जब हरी" ा की बारात में भाामिल होता है तो गाँव की एक दूकान पर उसे इसलिए चाय नहीं मिलती, क्योंकि उसे चूहड़ा समझा लिया जाता है। जबकि वह कहता है कि वह ब्राम्हण है। लेकिन कोई उसकी बात पर वि" वास नहीं करता। 'बामन हो तो चूहडों की बारात में क्या मूत पीने आया है.....यानी एक बामन का दलितों के साथ उठना–बैठना, सम्बन्ध रखना सामाजिक अपराध है। कमल उपाध्याय सिर्फ अपमानित ही नहीं होता उसके साथ हाथापाई भी होती है। वह भागकर खुद को बचाता है। सामाजिक यथार्थ की बेबाक अभिव्यक्ति दलित कहानियों का जीवन्त बनाती है।

सामाजिक भाोशण का अपनी नियति मान लेनेवाले दलित की जब आँख खुलती है तो उसकी जिहवा पर उत्पीड़न का दर्द भााप बनकर फुटता है, 'तेरे कीड़े पड़ेंगे चौधरी, कोई पानी देने वाला भी ना बचेगा।' (पच्चीस चौका डेढ़ सौ–ओमप्रका" ा वाल्मीकि)

दलित उत्पीड़न की निर्माण" ाला सिर्फ सामाजिक संस्थाएँ ही नहीं, भौक्षणिक संस्थान भी हैं, जहाँ दलितों को आज भी f" ाक्षा ग्रहण करने में अनेक बाधाओं को पार करना होता है। डॉ. दयानन्द बटोही की कहानी 'सुरंग' ऐसे f" ाक्षा संस्थानों की अमेद्य दीवारों में सुरंग बनाती है जहाँ द्रोणाचार्य के व" ाज आज भी एकलव्य का अँगूठा काटने के ' ाड्यन्त्र रचते हैं।

जहाँ एक और दलित अपनी पीड़ा को आक्रो" ा में बदलकर साहित्यिक अभिव्यक्ति को एक नया रूप दे रहा है, वहीं दूसरी और आत्मबोध की कहानियाँ भी रच रहा है।डॉ. प्रेम" ांकर की 'बित्ते भर जमीन' ऐसी ही कहानी है।

दलित महिला कथाकारों ने एक नई भूमि तैयार की है। डॉ. सु" ाीला टाकभौरे की कहानी 'सिलिया के मुख्य पात्र सिलिया को, जो बड़ी कठिनाइयों से मैट्रिक पास करती है, कोई भी लालच रास्ते से भटका नहीं पाता है। सुदृढ़ और पक्के इरोदोंवाली सिलिया ने जिस प्रकार के सामाजिक उत्पीड़न सहे है।, वे सब उसकी स्मृति में ताजा हैं । तमाम असुविधाओं के बीच भी वह सम्मान से जीना चाहती है। यही संकल्प उसे लड़ने का हौसला देता है। यह एक अन्तर्मुखी कहानी है जो सुधारवादी दृश्टिकोण से लिखी गई है। इसके ठीक विपरीत रजतरानी मीनू ने 'सुनीता' कहानी मे गम्भीर सरोकारों और बदलाव की उत्कट चाह को दलित नारी की आन्तरिक भाक्ति बनाया है। 'सुनीता' में यह क्षमता है कि वह अपनी बात पर अड़कर उसे मनवा सकती है। परिवर्तन की संघर्श" ाील प्रवृत्ति से संस्कारित सुनिता एक अद्भुत चरित्र है।कावेरी की कहानी 'द्रोणाचार्य एक नई कथा–संग्रह की

कहानियों के साथ 'सुमंगली' कुसुम मेघवाल की कहानी 'समय के f" ालालेख दलित नारी के अंन्तर्मन का उकेरनेवाली कहानियाँ हैं।

दलित कथाकारों के संदर्भ में प्रका" ा मनु का कहना है : 'हिन्दी के इन सहज कथाकरों वाल्मीकि, भयौराजसिंह बेचैन, प्रेमकुमार मणि, चन्द्रे" वर कर्ण आदि की कहानियों ने भारतीय समाज के एक ऐसे रोंगटे खड़े कर देनेवाले यथार्थ की ओर हमारा ध्यान खींचा है। जिसे पहले चादर की ओट कर दिया जाता था।'

डॉ. पुश्पपाल सिंह कहते हैं : ओमप्रका" ा वाल्मीकि की कहानी (अम्मा) एक अदभूत पात्र हिन्दी में प्रस्तुत करती है और हिन्दी मे दलित साहित्य का आन्दोलन–सा उठा है, उसमें अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराती... ओमप्रका" ा वाल्मीकि ने अम्मा के वर्गीय चरित्र और निजता को अत्यंत कु" ालता से उकेरा है।'

'अम्मा कहानी पर टिप्पणी करते हुए महे" ा कटारे लिखते हैं : ''अम्मा हिन्दी में दलित चेतना को स्वर देते हुए उपेक्षित वर्ग के संघर्श व आत्मसम्मान की रेखाएँ उभारती है।'

आलोचक जानकीप्रसाद भार्मा अपने लेख 'परम्परा से रि" ता और समकालीन दृश्टि' में लिखते हैं : उभरती हुई दलित चेतना के साथ नए कथाकारों का रि" ता भी एक विचारणीय मुद्दा है। पिछले कुछ वर्शों में हिन्दी क्षेत्र में दलित चेतना का एक नया उन्मेश हुआ है, लेकिन इसके अपने अन्तर्विरोध भी हैं। इस उन्मेश के मूल में जो आर्थिक प्र" न थे वे पीछे छूट गए और यह आन्दोलन केवल वर्ग या जाति की समस्या तक सीमित होता जा रहा है। वर्ण और वर्ग के अन्तर्विरोध दिन–ब–दिन गहराते जा रहे हैं।'

दलित साहित्य की गहनतम पीड़ा से सहमत होते हुए उनका कहना है : नई कहानी के प्रवक्ता 'प्रामाणिक अनुभव की बात यों ही नही करते थे। इसलिए जिन कथाकारों के पास दलित जीवन के प्रत्यक्ष अनुभव हैं अथवा जिन्होंने इस जीवन से गहरा मानसिक साहचर्य स्थापित कर लिया हो उनक लेखन में यह आँच बराबर महसूस होती है। प्रेमकुमार मणि, सुरे" ा कांकट, ओमप्रका" ा वाल्मीकि आदि कथाकारों के यहाँ दलितों के बहुरूपीय भाोशण के सच्चे चित्र मिलते हैं।'

दलित जीवन की नारकीय विभीशिकाएँ जहाँ दलित कहानियों को जीवन से जोड़ती हैं, वहीं ये कहानियाँ मानवीय सरोकारों को प्रतिबध्दता के साथ प्रस्तुत भी करती हैं। अपनी अस्मिता की तला" ा और व्यापक स्तर पर अपने अधिकारों के प्रति सजगता इनमें स्पश्ट दिखाई पड़ती हैं । सामाजिक जीवन के अन्तर्सम्बन्धों की जटिलता ने जो खाई पैदा की है, उसे पाटने का काम भी दलित कहानियों की प्राथमिकताओं में है।

निश्कर्श :–

निश्कर्शतः प्रस्तुत काहानियां आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य में हुए प्रयोग की बनावट को रेखांकित करती है। इन कहानियों के नाटकीय जीवन में भाोशित पददलित मनुश्यों की अछूती संवेदना को व्यापक यथार्थ धरातल पर प्रस्तुत किया गया है। सम्प्रेश्य सामाजिक यथार्थ के संदर्थ मे दलितों का

जीवन स्थानीय राजनीतिक स्वार्थी दांव पेचों, परम्परागत धार्मिक रूढ़ियों, सामंती पूंजीवादी और सरकारी तंत्र के आर्थिक भाोशण और सामाजिक विशम परिवे" ा के प्रति जागृत होता भाोशित वर्ग भाोशण के f" ाकंजे के विरूध्द आवाज बुलन्द कर रहा है। प" ा से भी लांछित जिन्दगी जीने वाले इन मनुश्यों में अपने अस्तित्व के प्रति अस्मिता का भाव बोध पैदा हुआ है।

समकालीन कहानियों के संसार में समाज के उपेक्षित एवं पिछड़ी जातियों के जीवन की समस्या का आकलन हुआ है। इन कहानियों की मूल संवेदना में निम्नवर्गीय पद दलित समाज के नारकीय जीवन से उभरती भाारीरिक एवं मासिक वेदना की कसमसाहट, सामाजिक विशमता, अन्याय, अत्याचार के विरूध्द संघर्श की अनिवार्यता मौजुद है। विशम व्यवस्था में मौजुद भाोशण के संगठनों, सभ्य समाज की प" ाुता और हिंसक प्रवृत्तियों के विरूध्द विद्रोही दलित मनुश्य अपने श्रम का मूल्य पहचानने और मानवीय अधिकार प्राप्त करने की भाक्ति उभरी है। नारकीय परिस्थितियों में जीवन जीते हुए इनके विलक्षण जीवट वाले पात्रों में भाोशण के ओर दारूण यातनाओं के f" ाकार होने पर भी जीवन के प्रति बेदर्द, बेधडक, अदम्य संघार्शात्मक जिजीविशा हमे" ा विद्यमान रहती है। भाोशित जीवन की मानवीय आ" ा और आकांक्षाओं को उभारने के साथ –साथ इन कहानियों ने समाज के भाोशण दयनीय चेहरों को बेनकाब कर दिया है।

संदर्भ :–

1. कमले" ा सचदेव–'आवाजें' (मोहनदास नैमि" ाराय) की भूमिका 'दहकते विरोध के आसपास का यह संग्रह' समता प्रका" ान दिल्ली, 1998.
2. प्रका" ा मनु–सदी के आखिरी दौर की कहानी का चेहरा, दस्तावेज–82 (सं–वि" वनाथ प्रसाद तिवारी), जनवरी–फरवरी–मार्च, 1998, पृश्ठ 7
3. डॉ. पुश्पपाल सिंह–चयन–दृश्टि (भूमिका) कहानी चयन, 1996 अभिरूचि प्रका" ान, दिल्ली, 1998
4. महे" ा कटारे–बर्तन बयान इकबालिया (सम्पादकीय), वसुधा, अंक 33–34, दिसम्बर, 1995, 1 जनवरी–15 मार्च, 1996 पृश्ठ 11
5. जानकी प्रसाद भार्मा–परम्परा से रि" ता और समकालीन दृश्टि' आजकल, अंक मई–जुन, 1995, पृश्ठ 16
6. रमणिका गुप्ता, दुनिया का यथार्थ,नवलेखन प्रका" ान, हजारीबाग, 1997
7. जानकी प्रसाद भार्मा–वही।